भगवान महावीर और मालवपति दशार्णभद्र

□ संकलनकर्ता—मुनि भास्कर (रत्न)

अनेकान्तवाद के सफल उपदेशक युगदृष्टा चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर ने एकदा बिहार प्रान्त एवं उत्तर प्रदेश के छोटे-मोटे ग्राम-नगर-पुर-पाटन आदि को चरणों से पावन करते हुए, धर्मोपदेश द्वारा भवी रूपी सरोजों को विकसित करते हुए, एवं मिथ्यात्व को तितर-बितर करते हुए हरे-भरे माता पदवी से विभूषित जैसा कि—

"देश मालवा गहन गम्भीर, डग-डग रोटी पग-पग नीर।"

इस कहावत के अनुसार उस महामहिम मालव धरती पर प्रथम चरण धरा। दूसरा भी इसी क्रमानुसार चरण धरते हुए दसपुर (मन्दसौर) के उस रमणीय शोभा-वर्धक उद्यान में आ विराजे। वन पालक ने अविलम्ब यह मंगल सूचना जनप्रिय सम्राट् दशार्णभद्र को दी—"नाथ! आज सारे नगर निवासियों का भाग्योदय हुआ है। आप जिन भगवान के नाम की सायं-प्रातः अर्चा-चर्चा करते हैं, क्षण-क्षण पल-पल जिनकी आप प्रतीक्षा करते हैं एवं जिनके विषय में पूछ-ताछ भी आप निरन्तर किया करते हैं। वे दीनों के प्रतिपालक, करुणा, क्षमा के भंडार, अहिंसा के अवतार, दुःखी-दरिद्रों के उद्धारक, उत्कृष्ट ज्ञान-दर्शन के धारक, सर्वजनहिताय, सर्व जीव सुखाय, स्वयं तिरने वाले, एवं दूसरों को तारने वाले ज्ञातपुत्र भगवान महावीर अपने शिष्य समुदाय सहित इस शोभावर्धक उद्यान में पधारे हैं। बस यही शुभ सूचना देने के लिए मैं आपकी सेवा में आया हूँ।"

खुश खबर सुनकर नृप दशार्णभद्र का मन-मयूर भक्ति के वशीभूत होकर जोरों से नाच उठा, झूम उठा। तत्क्षण सिंहासन से उतरा, अपने कमनीय कोमल अंगों को सम्यक् प्रकार से संकोच कर प्रभु महावीर को वहीं से विधिवत् वन्दन-नमन कर पुनः सिंहासन पर आसीन हुआ और सूचनादायक को सहर्ष विपुल जीवनोपयोगी धनराशि देकर विदा किया। आज प्रभु की धर्म देशना से दशपुर की रंग-स्थली, तीर्थस्थली बन चुकी थी। उसी उद्यान के सन्निकट साफ-सुथरे विशाल भू-भाग पर देवताओं ने समवसरण की रचना की थी। जिसमें हजारों नर-नारियों का समूह चारों ओर से उमड़ पड़ा था। नभ मार्ग से देव देवी परिवार भी सोल्लास धरा पर उतर रहे थे, तो तीसरी ओर से पशु-पक्षी की पंक्तियाँ भी एक के बाद एक उसी ओर वाणी-सुधापान हेतु भागी आरही थी। इस प्रकार दशपुर का पवित्र प्रांगण प्रभु के पदार्पण से धन्य-धन्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हो उठा। भगवन्त ने उत्कृष्ट निनाद से मिष्ट-शिष्ट मेघघोष की तरह गम्भीर सभी जगह सुनाई देनेवाला, भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के विभिन्न सन्देहों का एक ही साथ एक बात में निराकरण करने वाला दिव्य प्रवचन प्रारम्भ किया। मानो प्रवचन के महान् लाभ से कोई वंचित न रह जाय, इस कारण प्राणी-प्राणी और ज्ञानी-ध्यानी में दौड़ा-दौड़ एवं होड़ा-होड़-सी लगी थी।

दशार्णभद्र ने भी सोचा—"मुझे भी अतिशीघ्र प्रभु दर्शन के लिए जाना है। क्योंकि प्रभुदर्शन, वाणी, चरणस्पर्श, सेवा भक्ति एवं महा मांगलिक का सुनना पुण्यवंत को ही मिलता है। अतः ऐसा सुनहरा मौका मुझे सहज में ही मिला है। घर बैठे गंगा आई, फिर प्यासा क्यों रहूँ और कर्मदल-मल को दूर करूँ ? अतएव क्षणमात्र का भी प्रमाद न करते हुए मुझे सेवा में पर्युपासना में पहुँचना अत्यन्त अत्युत्तम रहेगा। दूसरे ही क्षण अपर विचारों की तरंगें उठ खड़ी हुई "क्या सीधी-सादी पोशाक में जैसा खड़ा हूँ, वैसा ही चला जाऊँ ? नहीं-नहीं। यह तो सामान्य वैभव का दिग्दर्शन-प्रदर्शन होगा। साधारण वेश में तो नगर के प्रत्येक नर-नारी जा ही रहे हैं। मुझमें और साधारण जन में परिधान-वाहन का अन्तर तो होना ही चाहिए।

मुझे पूर्वकृत पुण्य प्रताप से अपार धनराशि, दास-दासी एवं द्विपद-चतुष्पद आदि सभी प्रकार की सम्पत्ति मिली हैं। उसका उपयोग करना ही तो श्रेयस्कर होगा। वर्ना एक दिन तो इस सम्पदा का विनाश सुनिश्चित है। अतएव प्रभु दर्शन के बहाने सम्प्रति सम्पत्ति का सांगोपांग रूप से प्रदर्शन करना समयोचित ही रहेगा। इससे समीपस्थ राजा-महाराजाओं पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा और यत्र-तत्र-सर्वत्र सभी को ऐसा मालूम हो जायेगा कि नृप दशार्णभद्र के पास अटूट खजाना विद्यमान है। आगन्तुक जन समूह भी मेरे विपुल-वैभव का सहज में ही दर्शन भी कर सकेगा और अनुभव भी उनको ऐसा हो जायेगा कि—नृप दशार्णभद्र के सिवाय इतना विशाल आडम्बर और ठाट-बाट के साथ अन्य कोई भी सम्राट् आज दिन तक भगवान महावीर के दर्शन के लिए नहीं आया। 'एक पन्थ अनेक काज' काम का काम, नाम का नाम और दर्शन के बहाने वैभव का प्रदर्शन जहाँ-तहाँ मेरे नाम की माला फिरने लगेगी। बस सम्पूर्ण लाव-लश्कर के साथ जाने की नृप ने ठान ली। उत्साह उमंग के साथ-साथ राजा के मन-मस्तिष्क में भरी नदी की तरह अभिमान का वेग भी बढ़ने लगा। "भारी से भारी तैयारी करो" चतुरंगिणी सेनापतियों को नृप की ओर से शीघ्र आदेश मिला। तदनुसार सुवर्णाभूषणों से भूषित हजारों हाथी-घोड़े-रथों की पंक्तियाँ आ खड़ी हुई। जिनमें नृप दशार्णभद्र का गजरत्न मानो देवेन्द्र सवारीवत् और प्रमुखा रानी का भी इन्द्राणीवत् भास रहा था। इस प्रकार हजारों पैदल सेना से परिवृत हुए, समस्त परिवार से घिरे हुए गाने-बजाने की जयघोष से दशों-दिशाओं को पूरित करते हुए नृप आगे बढ़ने लगे। जनता असीम वैभव का दर्शन का आश्चर्योदधि में डूब रही थी। इतना वैभव ! हमारे नाथ के पास। युग-युग तक जीओ हमारे भूपति ! दशार्ण-भद्र ! इस प्रकार जनता भवनोपरि से शुभ मंगल कामना से सुमनों को बिखेर रही थी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं हर्षित थी। इस प्रकार सवारी समवसरण की दिशा में आगे बढ़ रही थी और पीछे वैभव की सुदूर तक एक लम्बी कतार। जो सचमुच ही नृप के लिए अभिमान बढ़ने का निमित्त बनती जा रही थी।

"प्रभु अभी हाल कहाँ विराज रहे हैं ?" दर्शन की भावना से शक्रेन्द्र ने अवधि-ज्ञान से देखा, तो प्रभु दर्शन के साथ-साथ दशार्णभद्र के वैभव से लदी उस सवारी को और नृप के जीवन में उमड़ते हुए उस अभिमान के वेग-प्रवाह को भी देखा। अहो ! कितना गर्व ? कितना अभिमान ? मैं भी अभी मानवीय धरातल पर जाऊँ और बताऊँ कि वैभव किसे कहते हैं। वास्तव में नृप दशार्णभद्र कूप-मंडूक मालूम पड़ रहा है। तभी तो बिन्दु सम्पत्ति पर फूला नहीं समा रहा है। बस, उसी समय शकेन्द्र ने वैक्रिय शक्ति से समवय वाले एक समान आकार एवं रंग-रूप वाले, एक सौ आठ देवकुमार तथा उतनी ही देवियाँ अपनी युगल भुजाओं में से प्रकट किये। दैविक शक्ति के प्रभाव से कई हाथियों की कतारें तैयार कर ली गईं। एक-एक हाथी के दाँत की नुकीली नोक पर बावड़ी जिसमें निर्मल नीर में विकसित कमल पुष्प लहलहा रहे हैं और कमलों की एक-एक पँखुडी पर सोलह शृंगार से शृंगारित सुरांगना अतिमोदपूर्वक नृत्य कर रही हैं। ऐसे एक नहीं अनेकानेक हाथी धरातल पर दशार्णभद्र की सवारी के ठीक सामने एक के बाद एक उतरते दिखाई दिये।

दशार्णभद्र ने आकाश मार्ग से उतरती हुई अपूर्व ठाट-बाट वाली इन्द्र सहित सवारी को देखा। देखते ही चकित से रह गये। इन हाथियों के सामने मेरी यह सवारी ! आडम्बर युक्त यह साहबी, बिल्कुल फीकी है और तो ठीक किन्तु इस एक ही हाथी के समक्ष मेरा सारा वैभव तुच्छ एवं नहीं के बराबर है। वस्तुतः कूप-मण्डूक की तरह मैं अपनी लघु विभूति पर व्यर्थ ही फूल रहा हूँ। थोड़ी-सी सम्पत्ति पाकर क्षुद्र नदी की तरह शोर मचा रहा हूँ और आधे कुम्भ की तरह छलक रहा हूँ। बस अपने आप में नृप दशार्णभद्र ने बहुत लज्जित होकर सिर नीचे कर दिया। अभिमान हिम की तरह द्रवित हो उठा। मान-अभिमान का नृप ने समूल दाह संस्कार किया। लेकिन स्वाभिमान को अमर कैसे रखूँ ? ताकि बात की करामात सोलह आना बनी रहे।

उफ्····· ! स्वाभिमान को मिटाना और अमिट रखना मेरे हाथ का ही तो खेल है। बस, अनित्य भावना के उद्गार उभरे—"अणिच्चं खलु भो ! मणुयाणजीवियं कुसग्ग जलबिन्दु चंचलं।" मैं गृहत्याग करके प्रभु के चरण-शरण में पहुँचूँ। फिर देखें इन्द्र किस प्रकार होड़ कर सके ? जीवन के लिए यह भी तो नाटक करना आवश्यक है। बस सारी सवारी समवशरण में पहुँची। चरणस्पर्श करके दोनों हाथ जोड़कर नृप बोला—आराध्य प्रभो ! विभाव दशा के कारण मैं काफी समय तक कषाय किंकर बना रहा, अब मुझे नित्यानित्य का भान हुआ है। अतएव अति शीघ्र इस उपस्थित जनता के समक्ष ही आप मुझे अपना शिष्य बनाइये। दीक्षा देकर मुझे दिव्य पाँच महाव्रत रूप महारत्नों को देकर कृत-कृत्य बनाने की महती कृपा कीजिए। यह मेरी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विनम्र एवं लघु प्रार्थना है ताकि भगवतचरणाश्रय से जीवन का उद्धार कर सकूँ।

शक्रेन्द्र और सारी जनता की निगाह एकदम नृप की विरागता पर थी। कहाँ तो भोग-ऐश्वर्य के पिपासु और कहाँ योगेश्वर बनने के लिए इतनी दृढ़ विरतता!

अरे! इसी को कहते हैं 'गुदड़ी के लाल ने कर दिया कमाल।' जनता अचरज करती हुई दशार्णभद्र के आदर्श त्याग-वैराग्य की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगी।

शीघ्र ही प्रभु ने नृप दशार्णभद्र को आर्हती दीक्षा प्रदान की। दशार्णभद्र नृप अब मुनि के पद पर आसीन हुए। जनता के हजारों मस्तक श्रद्धा भक्ति से मुनि दशार्णभद्र के पद-पंकज में झुक गये। इन्द्र ने भी अपना मस्तक नवाया। पूर्व अवहेलना एवं अपमान की क्षमा याचना माँगी और बोला—"मुनीश्वर! आपके आदर्श व महा मूल्यवान इस वेष की तुलना में मैं तथा मेरा समस्त वैभव तुच्छ है, कुछ भी समानता नहीं कर सकता। आप आध्यात्मिक तत्वों के धनी हैं, पुजारी एवं साधक हैं, जबकि हम तो भौतिक सुखों के दास हैं, भोगों में ही भटक रहे हैं। यह अद्वितीय घटना इतिहास में अमर रहेगी। मुने! आपका स्वाभिमान-शाश्वत है। उसको कोई भी शक्ति क्षीण नहीं कर सकती है।" ऐसा कहता हुआ इन्द्र अधिक स्तुति करता हुआ चला गया।[१]

१ दसण्णरज्जं मुइयं, चइत्ताणं मुणी चरे।
दसण्णभद्दो निक्खंतो, सक्खं सक्केण चोइओ॥ (उत्तरा० १८।४४)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org